भारतीय साहित्य में जैन वाङ्मय का स्थान

(डॉ. पंडित श्री विष्णुकान्त)

भारतीय वाङ्मय की धारा अनेक रूपों, अनेक भाषाओं में अजस्र रूप से प्रवाहित होती हुई अनन्त काल से विश्व में 'अपना अप्रतिम स्थान बनाए हुए है ।' अनेक मत, संप्रदाय और धर्मों के संपूर्ण साहित्य का हस्तलिखित और अप्रकाशित भण्डार अनुमान से भी कहीं अधिक है । भारतीय मनीषा विज्ञापन से दूर रही है, तटस्थता और अध्यवसाय से उसे प्रेम रहा है । यही कारण है कि अनेक विश्वविश्रुत लेखक - कवि आचार्य एकांत साधना में तो लीन रहे, किंतु अपने विषय में खुलकर कुछ भी कह नहीं सके । विदेशी लेखक - इतिहासकारों ने उनके विषय में जो कुछ लिखा, उसकी सीमा ईसा पूर्व और ईसा के पश्चात् की सीमाओं के आस-पास ही मिलती है । (यद्यपि इस समय-सीमा से सहमति सभी स्थलों पर होना आवश्यक नहीं है ।)

भारत में इतिहास लेखन की परंपरा बहुत प्राचीन नहीं रही । संस्कृत प्राकृत-पालि-अपभ्रंश और हिंदी के साहित्य इतिहास ग्रंथों की संख्या आज भी सीमित ही है । जैन साहित्य के प्रति संस्कृत-इतिहासकारों की आरंभिक दृष्टि उदासीनता को पूर्णतः छोड नहीं पायी । इसमें या तो उनकी अन्वेषक बुद्धि की मंथरगति कारण हो सकती है, या फिर "हस्तिना ताड्यमानोऽपि" ... जैसी संकीर्ण उक्तियाँ कारण हो सकती हैं । धर्म को लेकर अपने देश में भी अनाचार कम नहीं हुए । हो सकता है उसी धर्मान्धता ने उन लेखकों को जैन-साहित्य के प्रचार-प्रसार की ओर न जाने दिया हो ।

पिछले चार-पाँच दशकों में जैन धर्म, दर्शन और साहित्य का परिचय अनेक संस्थाओं और प्रकाशनों के माध्यम से लोगों तक पहुँचा है । और उन ग्रंथों से ही जैन साहित्य की अक्षुण्ण परंपरा की सूचना मिलती है । इस प्रकाशित साहित्य के अतिरिक्त अनेक ग्रंथ हस्तलिखित रूप में विविध ग्रंथ भण्डारों में रखे हुए हैं । वस्तुतः भारतीय वाङ्मय की पूर्णता जैन साहित्य के बिना मानी ही नहीं जा सकती । यहाँ जैन साहित्य का संक्षिप्त परिचय देकर अपनी बात स्पष्ट करना चाहेंगे ।

सुविधा की दृष्टि से जैन साहित्य को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है :- धर्म-दर्शन विषयक आगम साहित्य और आगमेतर साहित्य । आगम साहित्य में धार्मिक उपदेश, कर्म साहित्य, आचार, तत्व विचार, ज्ञानमीमांसा, दर्शन आदि पर विस्तारपूर्वक और स्पष्टरूप से विचार प्रस्तुत किये गये हैं । पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, जैनाश्रम, हिंदुयुनिवर्सिटी वाराणसी द्वारा प्रकाशित साहित्य इस दृष्टि से अच्छी पहल है । "जैन धर्म का प्राचीन इतिहास" (पंडित परमानंद शास्त्री द्वारा लिखित) समग्र रूप में जैन धर्म और साहित्य की सूचना देने वाला ग्रंथ है ।

आगमेतर साहित्य की दृष्टि से जैन साहित्य का भण्डार किसी भी साहित्य की तुलना में हेय नहीं है । महाकाव्य, पुराण एवं पौराणिक महाकाव्य, गद्य काव्य, चंपू काव्य, कथाकाव्य - किसी भी विद्या में जैन साहित्य पीछे नहीं रहा । संस्कृत प्राकृत, एवं अपभ्रंश तीनों भाषाओं में अबाध गति से जैन लेखकों ने लिखा है । आधुनिक काल में भी जैन साहित्य लिखा जा रहा है ।

रामकाव्य एवं कृष्णकाव्य परंपरा में जैन साहित्य का अमूल्य योगदान रहा है । विमलसूरिकी परंपरा में उनका 'पउमचरिय' (प्राकृत, जैन महाराष्ट्री) रविषेण का 'पद्मपुराण' या 'पद्मचरित' शीलाचार्यकृत 'चउपन्नमहापुरिसचरिय' के अंतर्गत 'रामलक्खणचरिय' भद्रेश्वरकृत कहावली के अंतर्गत 'रामायणम्' भुवनतुंग सूरिकृत 'सीया चरिय' तथा 'रामलक्खणचरिय' हेमचंद्रकृत 'त्रिषष्ठीशलाकापुरुषचरित' के अंतर्गत "जैन रामायण" हेमचंद्रकृत 'योगशास्त्र की टीका' के अंतर्गत "सीतारावणकथानकम्" जिनदासकृत "रामायण" अथवा "रामदेवपुरान" पद्मदेव विजयगणिकृत 'रामचरित' सोमसेनकृत 'रामचरित' आचार्य सोमप्रभकृत, 'लघुत्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित' प्रमुख है । अपभ्रंश में स्वयंभूदेव कृत 'पउमचरिउ' अथवा "रामायण पुराण" और रइधूकृत 'पद्म पुराण' (अथवा बलभद्रपुराण), कन्नड में नागचंद्र (अभिनवपम्प) कृत "पम्परामायण" अथवा "रामचंद्रचरितपुराण" कुमुदेन्दुकृत "रामायण" देवप्पकृत 'रामविजय चरित' देवचंद्रकृत 'रामकथावतार' चंद्रसागरवर्णीकृत 'जिनरामायण' प्रमुख हैं ।

गुणभद्र की परंपरा में उनके 'उत्तरपुराण' कृष्णदास कविकृत 'पुण्यचंद्रोदयपुराण' अपभ्रंश में पुष्पदंतकृत 'तिसट्ठीमहापुरिसगुणालंकार' कन्नड में चामुंडरायकृत 'तिसष्टिशलाका पुरुषपुराण' बंधुवर्माकृत 'जीवन संबोधन' नागराजकृत 'पुण्याश्रवकथासार' के नाम लिये जा सकते हैं ।

यद्यपि यह निर्विवाद है कि रामकथा (भारतीय संस्कृत साहित्य में) सर्वप्रथम वाल्मीकि द्वारा निबद्ध की गयी, किंतु उपर्युक्त जैन कवियों द्वारा इसका विस्तार हुआ और आचार्य रविसेणने 'पद्मपुराण' लिखकर आगे आनेवाली कविपरंपरा को प्रभावित किया है । डॉ. रमाकान्त शुक्ल ने 'पद्मपुराण और रामचरितमानस' का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए अनेक बिंदुओं पर विचार किया है और तुलसीको 'क्वचिदन्यतोऽपि' के प्रकाश में रविषेण से प्रभावित माना है । यही नहीं आगे चलकर बीसवीं शताब्दी में हिंदी कवि मैथिलीशरणगुप्त के साकेत पर भी (सुलोचना प्रसंग में) रविषेण का प्रभाव दीख पड़ता है ।

कृष्णकाव्य परंपरा में जैन साहित्य का स्थान स्तुत्य रहा है । कृष्णचरित संबंधी आगमिक कृतियों - 'समवायांग सूत्र', ज्ञातृधर्मकथा,

अवसर को समझा नहीं, किया न उस का ज्ञान ।
जयन्तसेन गया समय, कभी न आता जान ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'अन्तकद्दशा', प्रश्नव्याकरण, ''निरयावतिका'' और उत्तराध्ययन, के अतिरिक्त आगमेतर कृतियों का विवरण इस प्रकार है :-

संघदासगणि-धर्मदासगणिकृत 'वसुदेवहिण्डी' (प्राकृत, पाँचवीं शताब्दी) आचार्य जिनसेनकृत ''हरिवंशपुराण (संस्कृत, आठवीं शताब्दी) स्वयंभूकृत 'रिट्ठणेमिचरिउ' (अपभ्रंश, आठवीं शताब्दी) गुणभद्रकृत 'उत्तरपुराण' (महापुराण) (संस्कृत, नवीं शताब्दी) पुष्पदंतकृत 'तिसट्ठी महापुरीसगुणालंकार' (अपभ्रंश, दसवीं शताब्दी) महासेन आचार्यकृत 'प्रद्युम्नचरित' (संस्कृत, दसवीं शताब्दी) आचार्यसोमकीर्ति विरचित 'प्रद्युम्नचरित' (संस्कृत दसवीं शताब्दी) हेमचंद्राचार्यकृत'' त्रिपष्टिशलाका पुरुष चरित (संस्कृत, ग्यारहवीं शताब्दी) धवलकृत 'हरिवंशपुराण' (अपभ्रंश, ११ वीं शताब्दी) दामोदरकृत 'णोमिणाहचरिउ' (अपभ्रंश १३वीं शताब्दी) देवेंद्रसूरिकृत 'कण्हचरिय (प्राकृत १३वीं शताब्दी) यशः कीर्तिविरचित - 'हरिवंशपुराण' एवं पांडवपुराण (अपभ्रंश पंद्रहवीं शताब्दी) लखमदेवकृत 'नेमिनाहचरिउ (अपभ्रंश १५वीं शताब्दी उत्तरार्ध (लिपिकाल) श्रुतकीर्ति विरचित 'हरिवंशपुराण' (अपभ्रंश लिपिकाल १५वीं शताब्दी उत्तरार्ध) कविसिंहकृत 'पज्जुण्णचरिउ' प्रतिलिपिकाल १५वीं शताब्दी, अंतिमदशक) रइधूकृत 'नेमिणाहचरिउ' (अपभ्रंश, सोलहवीं शताब्दी) शुभचंद्रकृत 'पांडवपुराण' (संस्कृत), ब्रह्मजिनदास और ब्रह्मनेमिदत्तकृत 'हरिवंशपुराण' रत्नचंद्रगणिकृत 'प्रद्युम्नचरित' देवप्रभसूरिकृत' पांडवपुराण (सभी १६वीं से १९वीं शताब्दी के मध्य प्रसिद्ध हैं ।)

हरिवंशपुराण और सूरसागर के तुलनात्मक अध्ययन के अवसर पर शास्त्रभंडारों में जाने का अवसर मुझे मिला है । राजस्थान के शास्त्र भंडारों में अनेक ग्रंथों की नामावली से कुछ हिंदी के नाम भी द्रष्टव्य हैं । (ये सभी रचनाएँ तेरहवीं शताब्दी से बींसवीं शताब्दी के मध्य लिखी/लिपिबद्ध की गयी हैं ।) :-

सुमतिगणिकृत 'नेमिनाथरास' कवि देल्हण (देवेंद्रसूरि) कृत 'गयसुकुमाल रास' कवि सच्चारूकृत 'प्रद्युम्नचरित' सोमसुन्दरसूरिकृत 'रंगसागरनेमिफागु' धनदेवगणिकृत ''सुरंगाभिधनेमिफागु'' ब्रह्मजिनदासकृत हरिवंशपुराण जयशेखरसूरिकृत 'नेमिनाथकागु' कविशोधीकृत 'बलिभद्रचौपाई' मुनिपुण्यरतनकृत ''नेमिनाथरास'' ब्रह्मरायमल्लकृत 'बलभद्रबेलि' शालिवाहन कृत 'हरिवंशपुराण' नरेंद्रकीर्तिकृत 'नेमिश्वर चन्द्रायण' कनककीर्तिकृत 'नेमिनाथ रास' देवेंद्रकीर्तिकृत 'पद्युम्नबन्ध' मुनिकेसर सागरकृत 'नेमिनाथरास' बुलाकीदास कृत 'पांडवपुराण' नेमिचंद्रकृत 'नेमीश्वररास' अजयराजपारसीकृत 'नेमिनाथ चरित्र' खुशालचन्दकालाकृत 'हरिवंशपुराण' तथा उत्तरपुराण जयमलकृत 'नेमिनाथ चरित्र' रतनभानुकृत 'नेमिनाथरास' विजयदेवसूरिकृत नेमनाथरास मनरंगलाल पल्लीवालकृत 'नेमचन्द्रिका' मन्नालालकृत 'प्रद्युम्नचरित' मुनिचौथमलकृत 'भगवाननेमिनाथ और पुरुषोत्तम कृष्ण (प्रकाशित) । उपलब्ध पुराण साहित्य की सूची पं. परमानंद शास्त्रीने अपने इतिहास में दी है । इसके अतिरिक्त महाकाव्यों का परिचय ''संस्कृत साहित्य का इतिहास'' में डॉ. वाचस्पति गैरोला ने प्रस्तुत किया । गद्यकाव्य और पद्यकाव्य विषयक सूचना भी आधुनिक इतिहास ग्रंथों में मिलने लगी है । आयुर्वेद, कोष, व्याकरण, अलंकार शास्त्रदर्शन पर भी जैन साहित्यकारों के योगदान अविस्मरणीय हैं ।

अपभ्रंश साहित्य में महाकाव्य, खंडकाव्य, मुक्तक, गद्य एवं कथा साहित्य के लिए डॉ. हरिवंश कोछड का 'अपभ्रंश-साहित्य' द्रष्टव्य है । 'भारतीय ज्ञानपीठ' द्वारा प्रकाशित ''भारतीय ज्योतिष'' में जैन लेखकों का योगदान स्पष्ट है । मानसागर द्वारा रचित ''मानसागरी'' ज्योतिष का अपूर्वग्रंथ हैं, जिसे सभी ज्योतिषाचार्य सम्मान देते हैं ।

आधुनिक युग में व्याकरण, दर्शन, कोष ज्योतिष आदि विषयों पर यद्यपि बहुत ही कम लिखा जा रहा है तथापि काव्य के क्षेत्र में लेखनी अविराम गति से चल रही है । प्रसन्नता की बात है कि हिंदी और अंग्रेजी भाषा में विपुल साहित्य का प्रकाशन होने लगा है । अनेक शोध पत्रिका इस क्षेत्र में साहित्य की सेवा कर रही हैं ।

१९८८ में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित आचार्य विद्यासागर का 'मूकमाटी' हिंदी महाकाव्य अपने प्रकार का एक अनूठा महाकाव्य है ।

प्रस्तुत लेख में सूचनामात्र ही प्रस्तुत की गयी है । जैन आगमसाहित्य और आगमेतर साहित्य का सांगोपांग विवेचन और विवरण लेख की सीमा में समा पाना असंभव है । अभी आवश्यकता है शोध और अन्वेषण की । शास्त्रभंडारों में शताब्दियों से रखे चले आ रहे ग्रंथों की पूरी अनुक्रमणिकाओं को विस्तार देने की आवश्यकता है । साहित्य के क्षेत्र में संकोच या संकीर्णता त्याज्य होती है । तभी तो साहित्य अपने वास्तविक अर्थ में सभी का हित कर पायेगा । जैन साहित्य रत्नाकर है, इसमें गोता लगाने वाले की क्षमता पर फल और रत्न की प्राप्ति निर्भर है ।

अंत में यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि रस अलंकार छंद, काव्यभेद, दर्शन, धर्मशास्त्र, संगीत, कोष, कथा, पद्य, गद्य, चंपू अनेकार्थ काव्य, पुराण, महाकाव्य, खंडकाव्य, हिंदी, संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, कन्नड आदि भाषाओं के रूप में जैन साहित्य ने भारतीय वाङ्मय के अंगप्रसंग को शक्ति दी है, उसे पुष्ट किया है । कहीं कहीं तो जैन दर्शन का 'अहिंसावाद' भारत ही नहीं विश्व साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता प्रतीत होता है ।'' वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति'' जैसे वाक्यों के सामने जैन अहिंसा की विजय वैजयन्ती आज भी अलग ही फहरती हुई दिखाई पडती है । समग्रतः जैन साहित्य के बिना भारतीय साहित्य की पूर्णता की कल्पना गगन - कुसुमावचय के समान है ।

❀ ❀ ❀

खाते-खाते दिन गया, सोते-सोते रात ।
जयन्तसेन मनन करो, क्या रहना निज हाथ ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org